दैनिक जागरण

Date:29-09-22

प्रतिबंध के बाद की चुनौतियां

दिव्य कुमार सोती, (लेखक काउंसिल आफ स्ट्रेटजिक अफेयर्स से संबद्ध सामरिक विश्लेषक हैं)

देश भर में ताबड़तोड़ छापों के बाद अंततः भारत सरकार ने कट्टरपंथी संगठन पापुलर फ्रंट आफ इंडिया यानी पीएफआइ और उससे संबंधित संगठनों पर पांच वर्ष का प्रतिबंध लगा दिया। यह संगठन 2010 में तब चर्चा में आया था, जब इसके कार्यकर्ताओं ने केरल में टीए जोसेफ नामक प्रोफेसर की कलाई सिर्फ इसलिए काट दी थी, क्योंकि उनके अनुसार जोसेफ द्वारा बनाए गए प्रश्नपत्र का एक प्रश्न इस्लामिक मान्यताओं का अपमान करता था। इस क्रूरता ने देश में सनसनी फैला दी थी। उससे व्याप्त आतंक का अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि केरल में मुखर रहने वाले चर्च ने भी उस समय जोसेफ का साथ छोड़ दिया था। ईसाई मिशनरी द्वारा संचालित जिस कालेज में वह पढ़ाते थे, उन्हें वहां से निकाल दिया गया। तंग आकर उनकी पत्नी ने आत्महत्या कर ली। इस बर्बर कृत्य के बाद पीएफआइ देश भर में अपने पैर पसारता गया। जिस आतंकी संगठन स्टूडेंट्स इस्लामिक मूवमेंट आफ इंडिया यानी सिमी पर प्रतिबंध लगा था, उससे जुड़े लोग भी पीएफआइ से जुड़ते गए। इसके बावजूद पीएफआइ पर कोई बड़ी कार्रवाई नहीं हुई।

पीएफआइ की क्रूरता के अंतहीन किस्से हैं। 2019 में उसके कार्यकर्ताओं ने मतांतरण पर एक बहस के कुछ घंटों बाद ही पीएमके नेता रामलिंगम की उनके घर में निर्मम हत्या कर दी थी। 2014 में केरल पुलिस द्वारा केरल हाई कोर्ट में दाखिल हलफनामे में पीएफआइ के कार्यकर्ताओं पर हत्या के 27, हत्या के प्रयास के 85 और सांप्रदायिक हिंसा के 106 मामलों में संलिप्तता का उल्लेख किया गया। इसके अलावा केरल पुलिस की ओर से उच्च न्यायालय के समक्ष यह कहा गया कि पीएफआइ सिमी का ही नया रूप है। किसी सख्त कार्रवाई के अभाव में बीते 12 वर्षों के दौरान पीएफआइ ने खाड़ी देशों से मिले चंदे और जकात के नाम पर लोगों को गुमराह कर देश-विदेश में अपना एक बड़ा तंत्र विकसित कर लिया। जिस संगठन ने एक अध्यापक का हाथ काटने से अपना आगाज किया हो, उसी का सहयोगी संगठन-कैंपस फ्रंट आफ इंडिया नाम से देश भर के विश्वविद्यालयों में फैल गया। इसका सहज ही अंदाजा लगाया जा सकता है कि वह छात्रों में कट्टरपंथ के कैसे बीज बोता होगा। इसका एक नमूना कर्नाटक के हालिया हिजाब विवाद और उसके चलते एक युवक हर्ष की हत्या के रूप में सामने आ ही चुका है।

पीएफआइ मिस्र में जन्मे इख्वान-उल-मुसलमीन यानी मुस्लिम ब्रदरहुड के प्रतिरूप को भारत में स्थापित करने के अंतरराष्ट्रीय षड्यंत्र का हिस्सा है। यह संगठन जाने-माने कट्टरपंथी मौलाना और जमात-ए-इस्लामी के संस्थापक मदूदी और मुस्लिम ब्रदरहुड के बड़े नेता अल कुतुब की विचारधारा को भारत में फैलाने में जुटा था। यह अतिवादी संगठन जब चुनाव जीतकर मिस्र की सत्ता पर बैठा तो उसके समर्थकों ने वहां हिंसा का ऐसा भयावह प्रदर्शन किया कि मिस्र की सेना और जनता को तख्तापलट कर उसे सत्ता से बेदखल करना पड़ा। जब मिस्र की अदालत में हिंसा फैलाने के मामले में मुस्लिम ब्रदरहुड के तत्कालीन सर्वोच्च नेता मोहम्मद मोर्सी पर मुकदमा चला तो पीएफआइ ने नई दिल्ली स्थित मिस्र दूतावास के बाहर भारी हंगामा किया। अपने छोटे शासनकाल में मुस्लिम ब्रदरहुड ने मिस्र के समाज में कट्टरपंथ का ऐसा जहर घोला कि उसके सेनाध्यक्ष जनरल सीसी को विश्व में इस्लामिक शिक्षा का केंद्र मानी जाने वाली अल-अजहर

यूनिवर्सिटी में जाकर कहना पड़ा कि यह कैसे संभव है कि मुसलमान विश्व में रह रहे गैर-मुस्लिमों को समाप्त करने की सोचें और उसमें सफल भी हो पाएं? मुस्लिम ब्रदरहुड को न सिर्फ मिस्र, बल्कि सऊदी अरब और संयुक्त अरब अमीरात जैसे तमाम इस्लामिक देश प्रतिबंधित कर चुके हैं। सिर्फ तुर्किये और कतर ही सऊदी अरब से अपनी प्रतिद्वंद्विता के चक्कर में मुस्लिम ब्रदरहुड को शह दे रहे हैं। यह भी न भूलें कि नुपुर शर्मा के बयान पर जब देश भर में बवाल हुआ तो इंटरनेट मीडिया पर भारत विरोधी ट्रेंड मिस्र और कतर जैसे उन्हीं देशों से चले, जहां मुस्लिम ब्रदरहुड की सक्रियता है। नुपुर के बयान पर सबसे पहले हंगामा करने वाली कतर सरकार ही थी, जिसका मुस्लिम ब्रदरहुड के साथ करीबी रिश्ता है। ये तथ्य भारत को अस्थिर करने की साजिश के बारे में बहुत कुछ कहते हैं।

भारत विरोधी मानसिकता वाले पीएफआइ पर प्रतिबंध की मांग तो नागरिकता संशोधन कानून को लेकर हुए दंगों के बाद से ही जोर पकड़ रही थी। पीएफआइ भी इससे भलीभांति परिचित होगा कि उस पर प्रतिबंध की तलवार लटकी हुई है। ऐसे में उससे निपटने की उसने पूरी तैयारी की होगी। खुफिया रिपोर्ट आती रही हैं कि पीएफआइ ने तमाम फर्जी पदाधिकारी बना रखे हैं, ताकि असली नेता कानूनी शिकंजे से बचे रहें। ऐसे में प्रतिबंध को प्रभावी ढंग से लागू करना सुरक्षा एजेंसियों के लिए एक बड़ी चुनौती साबित होगी। यह संगठन कितना सक्षम हो चुका था, यह इससे पता चलता है कि तमिलनाडु में छापे के दौरान गहरे समुद्र में चिह्नित होने से बचाने वाले यंत्र भी उसके कार्यकर्ता से बरामद किए गए। बिहार से पीएफआइ के ठिकाने से मिले उस दस्तावेज की भी अनदेखी नहीं की जा सकती, जिसमें 2047 तक भारत को इस्लामी राष्ट्र बनाने का खाका दर्ज था।

भारत सरकार ने अभी पीएफआइ की राजनीतिक इकाई एसडीपीआइ को प्रतिबंधित नहीं किया है। संभव है कि इसके लिए अभी कुछ और साक्ष्य एकत्र किए जा रहे हों या फिर इसमें और कोई पेच हो। हो सकता है कि चुनाव आयोग उस पर कोई चाबुक चलाए। हालांकि अतीत का अनुभव यही बताता है कि पीएफआइ जैसे संगठन पुरानी केंचुली उतारकर जल्द ही नया रूप धारण कर लेते हैं। ऐसे में सुरक्षा एजेंसियों को सतर्क रहना होगा कि यदि पीएफआइ ऐसा कुछ करे तो अविलंब उस पर शिकंजा कसा जा सके। ऐसे संगठन आतंकी विचारधारा को मुख्यधारा में लाने में पारंगत होते हैं। इस तरह ये सीमा पार सक्रिय आतंकी संगठनों से भी अधिक खतरनाक हैं, क्योंकि ये देश के भीतर ही जहर और आतंक फैलाते हैं।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date:29-09-22

परिभाषित हो 'आत्मनिर्भरता'

संपादकीय

भारत की विदेश व्यापार नीति में पिछली बार 2015 में सुधार किया गया था। माना गया था कि यह 2020 तक यानी पांच वर्षों तक काम करेगी। लेकिन एक हद तक महामारी की जटिलताओं की वजह से इसे छह-छह महीने के लिए आगे बढ़ाया जाता रहा। वैश्विक अर्थव्यवस्था अभी भी महामारी के कारण मची उथलपुथल से पूरी तरह नहीं उबर पाई है और

दुनिया भर में पनपे मुद्रास्फीति संबंधी दबाव तथा यूक्रेन पर रूस के आक्रमण ने अनिश्चितताओं में और इजाफा किया है। ऐसे में केंद्रीय वाणिज्य मंत्रालय ने नई विदेश व्यापार नीति जारी करने की योजना एक बार फिर स्थगित कर दी है। वैश्विक हालात को देखते हुए इस बात को समझा जा सकता है लेकिन तथ्य यह है कि एक नई व्यापक व्यापार नीति काफी समय से लंबित है। ऐसा इसलिए कि बाहरी व्यापार संपर्कों को लेकर व्यापक रुझान 2015 के बाद साफ तौर पर बदला है लेकिन इस नीति की नई दिशा के बारे में अभी कुछ भी स्पष्ट नहीं है।

सन 2015 में सरकार के मन में मुक्त व्यापार को लेकर साफ तौर पर संदेह थे। नए समझौतों को स्थगित रखा गया था और पुराने समझौतों की पड़ताल की जा रही थी। इसके अलावा द्विपक्षीय निवेश संधियों को निरस्त किया जा रहा था। इसके बाद कोविड-19 महामारी की शुरुआत के बाद अपने पहले प्रमुख भाषण में प्रधानमंत्री ने 'आत्मनिर्भरता' की अवधारणा प्रस्तुत की। यह स्पष्ट नहीं है कि विदेश व्यापार नीति में आत्मनिर्भरता का दरअसल क्या अर्थ है। कुछ लोगों ने इसकी व्याख्या घरेलू उद्योगों की क्षमता और प्रतिस्पर्धी क्षमता बढ़ाने के रूप में की। अन्य लोगों ने एक ऐसी आधुनिक औद्योगिक नीति की संभावना देखी जो ई-वाहनों अथवा माइक्रोचिप जैसे उभरते क्षेत्रों पर ध्यान केंद्रित कर सके। परंतु व्यवहार में 'आत्मनिर्भरता' की नीति के कदम मोटे तौर पर आयात प्रतिस्थापन पर केंद्रित रहे हैं। फिर भी सरकार ने जहां विभिन्न नए मुक्त व्यापार समझौतों पर कदम उठाए, संयुक्त अरब अमीरात के साथ एक व्यापक साझेदारी पर हस्ताक्षर किए, ऑस्ट्रेलिया के साथ एक सीमित समझौते पर हस्ताक्षर किए तथा ब्रिटेन और यूरोपीय संघ के साथ चर्चाओं को आगे बढ़ाया।

यहां साफ तौर पर विरोधाभासी बातें देखी जा सकती हैं। इसमें कतई चौंकाने वाली बात नहीं है क्योंकि 'आत्मनिर्भरता' महज एक जुमला ही है और यह अपने आप में कोई नीतिगत वक्तव्य नहीं है। एक विदेश व्यापार नीति को इस अंतर को पाटना चाहिए। उत्पादन संबद्ध प्रोत्साहन (पीएलआई) योजना उन समस्याओं का एक उदाहरण है जो विदेश व्यापार को लेकर असंगत रुख अपनाने से सामने आती हैं। यह स्पष्ट नहीं है कि पीएलआई योजना अस्थायी रूप से कमी पूरी करने पर आधारित है, निर्यात को बढ़ावा देने वाली व्यवस्था है, निवेश संवर्द्धन योजना है या चीन पर निर्भरता कम करने की भू-सामरिक कोशिश है। परंतु यह बात तय है कि ऐसी योजनाओं का लक्ष्य और उद्देश्य जब तक स्पष्ट परिभाषित न हों तब तक उनके येनकेन प्रकारेण मुनाफा कमाने का जरिया बन जाने का खतरा रहता है। इस योजना के विस्तार का राजकोषीय प्रभाव भी होगा।

एक के बाद एक कारोबारी क्षेत्रों को पीएलआई के अधीन लाया जा रहा है। जैसा कि रिजर्व बैंक के पूर्व गवर्नर जनरल रघुराम राजन ने भी कहा, ऐसी कोई वजह नहीं है कि सब्सिडी समाप्त हो जाने के बाद उत्पादन क्षमता का इस्तेमाल जारी रहे जबकि वह गैर प्रतिस्पर्धी हो चुकी होगी। यह स्पष्ट होना चाहिए कि कैसे अस्थायी सब्सिडी से प्रतिस्पर्धा स्थायी रूप से बढ़ेगी। फिलहाल पीएलआई योजना में यह स्पष्ट नहीं है। इस समझ के अभाव में अतीत की गलतियां दोहराई जाएंगी। सन 1991 के आर्थिक सुधारों के पहले आयात प्रतिस्थापन ने चालू खाते की स्थिति को कमजोर ही किया था। यह 'आत्मनिर्भरता' के खिलाफ है। इन मसलों को स्पष्ट रूप से परख और समझकर ही आगे बढ़ना चाहिए।

Date:29-09-22

नई बहुपक्षीय व्यवस्था और भारत के अवसर

मिहिर शर्मा

संयुक्त राष्ट्र महासभा ऐसे कार्यक्रमों और शिखर बैठकों का आयोजन करती है जो बहुपक्षीयता के संदर्भ में वर्ष की सबसे अहम घटनाओं को रेखांकित करती है। अगले महीने विश्व बैंक और अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष की सालाना बैठकें वॉशिंगटन में आयोजित होंगी। इसके अलावा जलवायु परिवर्तन पर विभिन्न देशों का सम्मेलन मिस्र में तथा नवंबर में जी20 देशों की बैठक इंडोनेशिया के बाली शहर में होगी।

चीन के उभार और युद्ध के बाद की विश्व व्यवस्था की कमजोरी के चलते बहुपक्षीयता पर पहले ही दबाव था और महामारी तथा यूक्रेन पर रूसी आक्रमण ने इसे बुरी तरह झटका दिया है। वैश्विक बाजार आगे पीछे होते रहे हैं और अर्थशास्त्रियों को पहले अपस्फीति और फिर मुद्रास्फीति की चिंता सताती रही। अभी भी यह स्पष्ट नहीं है कि जी20 की बैठक हो भी पाएगी या नहीं। ऐसा इसलिए कि अनेक देशों के नेता फिलहाल रूस के राष्ट्रपति पुतिन के साथ दिखना नहीं चाहते।

इसमें भी दोराय नहीं कि विश्व व्यवस्था का सुरक्षा ढांचा उस चीज को रोकने में नाकाम रहा जिसे उन्हें रोकना चाहिए था और वह है यूरोप में जंग। वे महामारी के दौरान टीकों आदि को लेकर एकजुटता दिखाने में भी नाकाम रहे। भारत उन देशों में शामिल है जो इन कठिनाईपूर्ण वर्षों से न्यूनतम आंतरिक आर्थिक और राजनीतिक उथलपुथल से निपट सकते हैं। ऐसे में भारत सरकार के पास अवसर है कि वह बहुपक्षीय व्यवस्था में आस्था बहाल करने की दिशा में दुनिया का नेतृत्व करे। इस वर्ष के अंत में भारत को जी20 की अध्यक्षता संभालनी है, ऐसे में यह दोगुना जरूरी है कि भारत ऐसे तरीके तलाश करे जिनकी मदद से बहुपक्षीयता में सुधार किया जा सकता है। इसके बावजूद अभी यह स्पष्ट नहीं है कि भारत को अध्यक्षता मिलने से ऊर्जा और खाद्य सुरक्षा बढ़ाने में क्या मदद मिलेगी या यूक्रेन संकट के अन्य प्रभावों को कैसे कम किया जा सकेगा।

इस स्थिति में सरकार जिस व्यापक सिद्धांत पर विचार कर सकती है वह यह है कि भले ही बहुपक्षीय संस्थान मौजूदा संकट से निपटने में नाकामयाब रहे हों लेकिन इसकी वजह से उन्हें मजबूत बनाने में कोई कमी नहीं की जानी चाहिए तभी वे दीर्घकालिक समस्याओं से निपटने में सक्षम हो सकेंगे। खासतौर पर फिलहाल दो प्रमुख वैश्विक बदलाव हो रहे हैं जो बहुपक्षीयता को बहुत अधिक लाभ पहुंचा सकते हैं: वे हैं डिजिटल और जलवायु परिवर्तन।

पहले डिजिटल बदलाव की बात करते हैं। यह वैश्विक अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों को प्रभावित करेगा जिसमें विनिर्माण भी शामिल है। यही आगे चलकर करों, मुनाफे और मेहनताने के वैश्विक वितरण को निर्धारित करेगा। परंतु इसे सबके लिए नि:शुल्क व्यवस्था के रूप में विकसित नहीं होने दिया जा सकता है जैसा कि महामारी की प्रतिक्रिया में देखने को मिला। स्वाभाविक सी बात है कि कुछ देश अपनी तकनीकी बढ़त कायम रखना चाहेंगे। गत सप्ताह पता चला कि अमेरिकी सीनेटर इस बात का परीक्षण कर रहे थे कि ऐपल को आईफोन 14 की माइक्रोचिप तकनीक को चीनी निर्माता से साझा करने से रोका जा सकता है? यदि हां तो कैसे? ऐसा इसलिए ताकि इस क्षेत्र में अमेरिकी बढ़त कायम रखी जा सके। वि

भिन्न क्षेत्रों में निजता और इंटरनेट को लेकर अलग-अलग रवैये होंगे। यह बात अहम है कि 21वीं सदी की बहुपक्षीयता का ध्यान इस बात पर केंद्रित है कि डिजिटल क्रांति की संभावनाओं का इस्तेमाल सूचना के प्रसार, जानकारी जुटाने और पहुंच को व्यापक बनाने में किया जाए। डिजिटलीकरण के कारण उत्पन्न कई समस्याओं से निपटने में भारत सरकार का प्राथमिक हल एक तीसरा तरीका हो सकता है जो निजी क्षेत्र के नेतृत्व वाले अमेरिकी मॉडल और चीन के सरकारी मॉडल के बीच का होगा। भारत का रुख व्यापक तौर पर घरेलू डिजिटल नवाचार और मुनाफे को इजाजत देने का है, बशर्ते कि वे इलेक्ट्रॉनिक तथा जनहित की वस्तुओं के ढांचे के भीतर हो और उन्हें राज्य ने विकसित किया हो तथा उनका इरादा समतापूर्ण पहुंच और सबके लिए समान परिस्थितियां मुहैया कराना हो। भारत इस सिद्धांत तक किसी डिजाइन की वजह से नहीं बल्कि संयोगवश पहुंचा। दरअसल ऐसा आधार की सफलता की वजह से हुआ। सार्वजनिक रूप से विनियमित मध्यवर्ती कंपनियां जो व्यक्तिगत डेटा का प्रबंधन करती हैं, ऐसे प्लेटफॉर्म जहां बाजार और विक्रेता दोनों जा सकते हैं, और जो पारदर्शी ई-कॉमर्स की सुविधा देता है, सार्वभौमिक भुगतान प्रणाली, स्थानांतरणयोग्य डिजिटल प्रमाणपत्र तथा रिकॉर्ड, और यहां तक कि कोविन प्लेटफॉर्म को भी इसी व्यापक परिदृश्य में काम करता देखा जा सकता है। यह निजी मुनाफे और नवाचार की सुविधा देता है, पहुंच बढ़ाने में मददगार है और राजकोषीय और सुरक्षा चिंताओं को दूर करने में भी मददगार है। अगला कदम है यह समझना कि इसे विभिन्न राजनीतिक और आर्थिक व्यवस्थाओं में कैसे प्रसारित किया जा सकता है, यह अंतरराष्ट्रीय व्यापार और निवेश में कैसे मदद कर सकता है और वैश्विक डिजिटल परिवर्तन में कैसे मदद कर सकता है। जलवायु संकट एक अन्य दीर्घकालिक विषय है जो अर्थव्यवस्था को प्रभावित करेगा। यहां बहुपक्षीय प्रयासों का ध्यान लंबे समय तक संकट की जिम्मेदारी तय करने में लगा रहा। यह दोष ऐतिहासिक रूप से अ धिक उत्सर्जन करने वाले देशों मसलन पश्चिमी देशों तथा चीन जैसे प्रतिव्यक्ति अत्यधिक उत्सर्जन करने वाले देशों पर है। परंतु जिन देशों को ऐतिहासिक रूप से नुकसान उठाना पड़ा उनके पास ऐसी कोई शक्ति नहीं है कि वे लाभान्वित होने वालों से किसी तरह की मांग कर सकें। ऐसे में जलवायु वार्ताओं का विफल होना लाजिमी है।

ऐसे में सही प्रयास तब होंगे जब हम समझेंगे कि दुनिया भर में किन क्षेत्रों, कंपनियों और लोगों को वैश्विक हरित बदलाव से संबद्ध अवसरों और खतरों के लिए तैयार रहना है। सूखे, बाढ़ और ऊर्जा असुरक्षा के रूप में खतरे तो जाहिर हैं। अवसर भी चाह जगाने वाले हैं। हालांकि भारत विनिर्माण के कई क्षेत्रों में पिछड़ चुका है। ऐसे में क्या वह नवीकरणीय ऊर्जा या ई-वाहन के क्षेत्र में बढ़त कायम कर सकता है? क्या भारत या अन्य उभरते देश हरित बदलाव के इन पहलुओं से लाभान्वित होगा यह धन की उपलब्धता पर निर्भर करेगा। विकासशील देशों में हरित परियोजनाओं को तमाम वित्तीय बाधाओं का सामना करना पड़ता है। उभरते विश्व की परियोजनाओं में जोखिम उठाने की क्षमता कम है। इसी प्रकार मुद्रा के उतार-चढ़ाव ने भी लागत को ऊंचा रखा है जिससे पूंजी की आवक को प्रोत्साहन नहीं मिला। बहुपक्षीय व्यवस्था को इन दिक्कतों से भी निपटना होगा।

विश्व बैंक की स्थापना फंड की ऐसी ही समस्याओं को दूर करने के लिए की गई थी। इसके बावजूद बहुपक्षीय विकास बैंक इस नए युग में ऋण व्यवहार अपनाने में बहुत धीमे रहे हैं। सरकारों को ऋण देने के बजाय इन बैंकों को निजी निवेश को बढ़ावा देना चाहिए, ऋण गारंटी देनी चाहिए और मिश्रित वित्तीय मदद की व्यवस्था करनी चाहिए। इस समस्या को हल किया जा सकता है क्योंकि अमेरिका से लेकर चीन और भारत तक सभी अंशधारक ऐसी व्यवस्था के पक्ष में हैं। इकलौता विरोध इन बैंकों के अफसरशाहों और प्रबंधन की ओर से होता है। विश्व बैंक के प्रेसिडेंट डेविड मालपास अगर जलवायु परिवर्तन संबंधी ऋण को लेकर प्रभावी काम नहीं करते तो उनको हटाए जाने का दबाव भी बढ़ रहा है। अगर भारत को जी20 की अपनी अध्यक्षता में जलवायु परिवर्तन पर बहुपक्षीयता का सार्थक काम सुनिश्चित करना है तो उसे

न केवल बहुपक्षीय विकास बैंकों के संचालन का माहौल और उनका रवैया पूरी तरह बदलना होगा बल्कि एक नए, पर्यावरण केंद्रित बहुपक्षीय संस्थान की स्थापना का भी प्रस्ताव रखना होगा जो भविष्य में साझा विकास का आधार बने।

जनसत्ता

Date:29-09-22

आखिर पाबंदी

संपादकीय

केंद्र सरकार से आखिरकार पॉपुलर फ्रंट ऑफ़ इंडिया यानी पीएफआर पर पांच साल के लिए पाबंदी लगा दी हैं और इस तरह पिछले कुछ दिनों से इस संगठन के खिलाफ लगातार चल रही कार्रवाई का सिरा अब अपने अंजाम पर पहुंच गया लगता है। गैरकानूनी गतिविधि रोकथाम कानून यानी यूएपीए के प्रावधानों के तहत इसे गैरकानूनी घोषित करते हुए सरकार की ओर से कहा गया है कि यह संगठन और इससे संबद्ध संस्थाएं सार्वजनिक तौर पर तो सामाजिक-आर्थिक और राजनीतिक रूप से काम करते हैं, मगर किसी खास एजेंडे के तहत समाज के एक वर्ग विशेष के बीच कट्टरता फैला कर लोकतंत्र की अवधारणा को कमजोर करने की दिशा में काम करते हैं। जाहिर है, अगर सरकार के आरोप सही हैं तो पीएफआइ एक तरह से संवैधानिक प्राधिकार और ढांचे का खयाल रखना जरूरी नहीं समझता। ऐसे में उस पर लगाई गई पाबंदी को प्रथम दृष्टया सही कहा जा सकता है। हालांकि कुछ अन्य संगठनों ने इस तरह पाबंदी लगाने को अलोकतांत्रिक कहा है, लेकिन सवाल है कि क्या बिना किसी मजबूत आधार के सरकार किसी संगठन के खिलाफ इतनी सख्त कार्रवाई कर सकती है!

दरअसल, हाल में पीएफआइ से संबंधित ठिकानों पर सुरक्षा एजंसियों ने जिस तरह छापे मारे और सवा दो सौ से ज्यादा लोगों को गिरफ्तार किया, शायद उसी में सरकार को इस बात के आधार मिले कि वह इस संगठन को लेकर क्या रुख अख्तियार करे। यों पीएफआइ की गतिविधियों को लेकर काफी समय से शक जाहिर किया जा रहा था कि क्या यह देश के संविधान के ढांचे के खिलाफ भी कोई काम कर रहा है, मगर देश के लोकतांत्रिक स्वरूप में अलग-अलग विचारों और उसकी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के सिद्धांत की वजह से कार्रवाई टलती रही। मगर अब सरकार का मानना है कि पीएफआइ और इसके सहयोगी संगठन या इससे जुड़ी संस्थाएं उन गैरकानूनी गतिविधियों में संलिप्त हैं जो देश की अखंडता, संप्रभुता और सुरक्षा के खिलाफ हैं। साथ ही इससे शांति और सांप्रदायिक सद्भाव का माहौल खराब होने और देश में उग्रवाद को प्रोत्साहन मिलने की आशंका है। अगर इन आरोपों के दायरे में पीएफआइ की कोई भी गतिविधि आती है तो यह गंभीर चिंता की बात है और स्वाभाविक ही सरकार ने इस मसले पर एक बड़ा कदम उठाया है।

इसमें दो राय नहीं कि देश के लोकतांत्रिक ढांचे में किसी भी संगठन को अपने विचारों या मतों के प्रचार-प्रसार का अधिकार है और पीएफआइ इसी के तहत अपनी जमीन मजबूत बना रहा था। लेकिन अगर आइएसआइएस यानी इस्लामिक स्टेट आफ इराक एंड सीरिया जैसे आतंकवादी समूहों के साथ उसके संपर्क के उदाहरण हैं तो इसे लोकतांत्रिक अधिकारों की किस परिभाषा के तहत देखा जाएगा? किसी भी समुदाय के संवैधानिक अधिकारों के लिए राजनीतिक

आंदोलन करने या आवाज उठाने से किसी को भी आपत्ति नहीं हो सकती, मगर लोगों के भीतर एकांगी या कट्टर विचार के साथ असुरक्षा का भाव भरने को कैसे उचित ठहराया जा सकता है? हालांकि देश के कुछ राजनीतिकों की ओर से ऐसी दलीलों के आधार पर अलग-अलग संगठनों पर प्रतिबंध लगाने को लेकर सरकार की कार्रवाई में भेदभाव पर सवाल उठाया गया है और उसके अपने संदर्भ हैं। मगर यह देखने की बात होगी कि अब से पहले सार्वजनिक रूप से निर्बाध अपनी गतिविधियां संचालित करने और आम लोगों के हित में काम करने का दावा करने वाला संगठन पीएफआइ अपने ऊपर लगे आरोपों को गलत साबित करता है या फिर एक बार और यह सामने आता है कि किसी समुदाय के भीतर असुरक्षाबोध पैदा करके हासिल किए गए समर्थन के बल पर कोई अलगाववादी संगठन गैरकानूनी तरीके से अपनी गतिविधियां संचालित कर रहा था!

Date:29-09-22

विज्ञान की ढाल

संपादकीय

इंसान ने जब पहली बार चंद्रमा पर कदम रखा था तो यह मानव जाति के इतिहास की सबसे बड़ी उपलब्धि बन गई थी। इसके बाद तो ब्रह्मांड के रहस्यों का पता लगाने की दिशा में अंतरिक्ष अभियानों का जो सिलसिला शुरू हुआ, वह अब थमने वाला कहां है! दूसरे ग्रहों पर जीवन की खोज और सृष्टि की उत्पत्ति का रहस्य जानने के मकसद से कई देश अंतरिक्ष अभियानों में जोरशोर से जुटे हैं। इसी का नतीजा है कि आज अंतरिक्ष और ब्रह्मांड के रहस्यों को लेकर नई-नई चीजें सामने आ रही हैं। हालांकि ऐसे अंतरिक्ष अभियान आसान नहीं होते और खर्चीले भी काफी होते हैं। यह कहना गलत नहीं होगा कि विज्ञान के क्षेत्र में इंसान ने आज जो कुछ हासिल कर पाया है, समंदरों और धरती से लेकर अंतरिक्ष की गुत्थियों को सुलझाने में जितने कदम बढ़ा पाया है, वह उन्नीसवीं और बीसवीं सदी में विज्ञान के विकास के ही संभव हो पाया। इसे मानव की कल्पनाओं का ही नतीजा माना जाना चाहिए कि आज सुदूर अंतरिक्ष की यात्रा के लिए अकल्पनीय गति से उड़ने वाले यान बनाने में कामयाबी मिल सकी है।

वैज्ञानिक शोधों और उपलब्धियों का यह सिलसिला लगातार बढ़ता जा रहा है। इसमें अब एक और नई चीज जुड़ गई है। वैज्ञानिकों ने अब आकाशीय पिंडों की टक्कर से धरती को बचाने का भी रास्ता निकाल लिया है। जैसे चंद्रमा पर पहली बार कदम रखना ऐतिहासिक घटना थी, उसी तरह यह प्रयोग भी मानव जाति के इतिहास में दर्ज हो गया। दो दिन पहले नासा के वैज्ञानिकों ने पहली बार धरती के करीब से गुजर रहे डिमोरफोस नामक एक छोटे पिंड में डार्ट अंतरिक्ष यान से टक्कर मार कर उसका रास्ता बदल दिया। खतरा यह था कि यह पिंड कहीं धरती से न टकरा जाए। एक करोड़ किलोमीटर से भी ज्यादा दूर बैठ कर इस तरह का सफल प्रयोग कोई मामूली काम नहीं था। हालांकि अंतरिक्ष में उपग्रहों को नष्ट करने जैसे प्रयोग भारत सहित कुछ देश कर चुके हैं। लेकिन अंतरिक्ष में विचरण कर रहे आकाशीय पिंडों को नष्ट करना या उनका रास्ता बदलने का प्रयोग अब तक सपना ही बना हुआ था। वैसे आकाशीय पिंडों से धरती को खतरा कोई नई बात नहीं है। यह तो धरती की उत्पत्ति के साथ ही खड़ा हो गया था। जैसा कि अब तक के वैज्ञानिक शोधों से स्थापित हुआ है कि सबसे विशालकाय जीव डायनासोर के खात्मे का कारण भी किसी आकाशीय पिंड का धरती से

टकराना ही था। ऐसे में आकाशीय पिंडों के खतरे से निपटना आज भी इंसान के लिए आसान नहीं है। हां, अंतरिक्ष और खगोल विज्ञान के विकास से इतना जरूर संभव हो पाया है कि अब गणनाओं के आधार पर यह पता लग जाता है कि कौन-सा आकाशीय पिंड धरती के कितने पास से और कब गुजरेगा।

सच तो यह है कि ब्रह्मांड आज भी इंसान के लिए रहस्यों का पिटारा ही है। फिर, अंतरिक्ष में होने वाली घटनाओं पर तो इंसान का वश नहीं है। ब्रह्मांड आज भी एक तरह से विकास और विस्तार की अवस्था में ही है। असंख्य छोटे-बड़े पिंड अकल्पनीय वेग से निरंतर विचरण कर रहे हैं। ऐसे में धरती के लिए सबसे बड़ा खतरा तो यही है कि कभी कोई पिंड इससे टकरा न जाए। हालांकि अंतरिक्ष से धरती पर उल्का पिंडों के गिरने की घटनाएं होती रहती हैं, जिन्हें रोक पाना संभव नहीं है। पर अब डिमोरफोस का रास्ता बदलने में कामयाबी मिलने से वैज्ञानिकों को यह उम्मीद तो बंधी है कि भविष्य में वे धरती के लिए खतरा बनने वाले किसी बड़े आकाशीय पिंड का भी रास्ता बदल कर मानव जाति को बचा सकते हैं।

Date:29-09-22

अनियोजित विकास के नतीजे

अतुल कनक

इस वर्ष सितंबर के महीने में भी जिस तरह भारत के कई शहरों में मूसलाधार बारिश हुई है, उसने उन लोगों की आशंकाओं को और मजबूत किया है जो लगातार कहते रहे हैं कि यदि पर्यावरण प्रदूषण पर समय रहते काबू नहीं पाया गया तो आने वाले समय में दुनिया की बड़ी आबादी के लिए जीवन बहुत कठिनाइयों भरा होगा।

यदि विक्रमी कलेंडर के अनुसार देखें तो यह आश्विन का महीना है। ऐसा नहीं है कि आश्विन में वर्षा होती ही नहीं हो। बल्कि आश्विन के महीने में होने वाली बरसात को मोती कहा जाता है। लेकिन मोती कभी इस तरह नहीं बरसते कि सामान्य जन-जीवन ही अस्त-व्यस्त कर दें। दुर्योग से इस वर्ष आश्विन माह में होने वाली बरसात ने कई शहरों को ठप कर दिया। बंगलुरु से लेकर गुरुग्राम, दिल्ली, जयपुर और देहरादून तक इस बारिश से त्रस्त रहे। नदियां तो उमड़ी ही, सड़कों पर होने वाले जलजमाव ने ऐसी हास्यास्पद स्थिति पैदा कर दी कि लोग हाथों में लैपटाप लिए हुए अपने आफिस जाने के लिए घरों से निकले और उन्हें जेसीबी मशीनों या ट्रैक्टरों में बैठ कर अपनी मंजिल तक पहुंचना पड़ा।

यह दृश्य किसी छोटे शहर का नहीं, बल्कि आइटी हब कहलाने वाले शहर बंगलुरु में सामने आया। मौसम विज्ञानी पिछले कुछ सालों से ला नीना को सितंबर में होने वाली बारिश का कारण बता रहे हैं। ला नीना और अल नीनो जटिल मौसमी

कारक हैं जो विषुवतीय प्रशांत महासागरीय क्षेत्र में समुद्र के तापमान में भिन्नता के कारण घटित होते हैं। अल नीनो और ला नीना की घटनाएं आमतौर पर करीब एक साल चलती हैं, लेकिन कुछ घटनाएं इससे भी लंबे समय तक जारी रह सकती हैं। ला नीना स्पेनिश भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ होता है- छोटी लड़की। जब पूर्वी प्रशांत महासागरीय क्षेत्र में जल का तापमान सामान्य की तुलना में कम हो जाता है तो ला नीना का असर देखा जाता है।

दुनिया के अलग अलग देशों में इसका असर देखने को मिलता है। मौसम विज्ञानियों का मानना है कि ये हालात साल के आखिर तक रह सकते हैं, यानी सर्दी के मौसम में भी इस साल भारी बारिश की संभावनाओं से इंकार नहीं किया जा सकता। शहरी आबादी को भी इन दिनों मामूली बारिश में ही जिन परेशानियों का सामना करना पड़ रहा है, वह विकास की किसी भी परिकल्पना के लिए अवांछनीय है। मुंबई और दिल्ली जैसे शहरों की रफ्तार बारिश के कारण होने वाले जलजमाव के बाद ठहर-सी जाती है। एक रिपोर्ट के मुताबिक मुंबई शहर को सन 2005 से 2015 के बीच बारिश के कारण चौदह हजार करोड़ रुपए का आर्थिक नुकसान हुआ। इसके अलावा तीन हजार लोगों की जान गई।

बंगलुरु इस बार की बारिश के कहर को शायद आसानी से नहीं भूल सकेगा, क्योंकि इस महानगर के ज्यादातर इलाकों में दफ्तर जाने वाले लोग और स्कूली बच्चे पानी में डूबी सड़कों को पार करने के लिए नावों और ट्रैक्टरों का इस्तेमाल करते देखे गए। भारत की सिलिकान वैली के नाम से मशहूर यह शहर इन दृश्यों के सामने खिसियाता हुआ सा नजर आया। कर्नाटक के मुख्यमंत्री बासवराज बोम्मई ने इस आपदा का ठीकरा पिछली सरकारों के कुशासन पर फोड़ते हुए स्वीकार किया कि इस आपदा का एक कारण यह भी है कि महादेवपुरा नामक एक छोटे से क्षेत्र में उनहत्तर तालाब थे। उनमें से अधिकांश या तो नष्ट हो गए या ज्यादा भर गए। उन्होंने पानी के प्रवाह में हुए अतिक्रमण को भी इस आपदा का मूल बताया। बंगलुरु में सन 1961 में दो सौ पचास से अधिक झीलें थीं। इनमें से अधिकांश एक विशेष निकासी व्यवस्था के जरिए आपस में इस तरह जुड़ी थीं कि इनके क्षेत्र में जमा पानी भरता नहीं था। लेकिन अब वहां सिर्फ पचासी झीलें ही रह गई हैं और उनके बीच जुड़ाव का तंत्र भी तहस-नहस हो गया है।

दरअसल, पुरानी झीलों या तालाबों का टूटना और पानी के प्राकृतिक बहाव वाले रास्ते में अतिक्रमण का होना केवल बंगलुरु शहर की समस्या नहीं है। भारत के अधिकांश शहरों को इन्हीं कारणों से सामान्य बारिश में भी जलजमाव की समस्या का सामना करना पड़ता है। अधिकांश शहरों की एक समस्या यह भी है कि वहां बस्तियों का नियोजन उनकी बसावट के पहले नहीं होता। जब किसी इलाके में लोगों की बसावट हो जाती है तो धीरे- धीरे उनकी बस्ती में मूलभूत सुविधाओं का ढांचा खड़ा करने का प्रयास किया जाता है। जबकि होना यह चाहिए कि पानी, बिजली, गैस जैसी सुविधाओं की आपूर्ति और गंदगी के निकास का तंत्र पहले ही तैयार कर लिया जाए। इसके अभाव में बार-बार सड़कें खोदी जाती हैं और नई-नई समस्याएं खड़ी होती जाती हैं।

देखने में आता है कि प्राकृतिक प्रवाह के विरुद्ध बहाव की दिशा वाले नाले जरा-सी बारिश में ही उफन पड़ते हैं। लगातार देखरेख के अभाव में निकासी के रास्ते बंद हो जाते हैं, क्योंकि नागरिकों द्वारा डाली जाने वाली गंदगी, विशेषकर प्लास्टिक कचरा नालियों को रोक देता है। इसी तरह बारिश का पानी सोखने वाली झीलों और मैदानों का अतिक्रमण कर लिया गया है। देश के अनेक शहरों की कुछ बस्तियों में तो ऐसा भी हुआ है कि बार-बार निर्माण के दौरान सड़क का स्तर इतना ऊंचा उठ गया कि वह घर की दहलीज के ऊपर चला गया। ऐसे में बारिश के समय जरा-सा पानी यदि सड़कों पर एकत्र होता है तो वह घरों में घुस जाता है। मुंबई जैसे महानगर की यह समस्या आम है।

इस समस्या का समाधान करने के लिए न केवल नगर नियोजन को सुधारना होगा, बल्कि आम आदमी को भी परिवेश और पर्यावरण के प्रति अपनी जिम्मेदारियों को समझना होगा। अल नीनो या ला नीना जैसी पर्यावरणीय घटनाएं मूल रूप से उस जलवायु परिवर्तन के कारण हैं जो दुनिया भर के मौसम तंत्र को प्रतिकूल रूप में प्रभावित कर रही हैं। इस साल जब भारत में वर्षा का मौसम था, तो यूरोप के कई देश झुलसा देने वाले तापमान का सामना कर रहे थे। स्थिति का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि इस तापमान में पिघलने से बचाने के लिए लंदन ब्रिज को ढांकना पड़ा था। सरकारों को अपने नागरिकों के लिए सड़कों पर ऐसी फुहारों तक का इंतजाम करना पड़ गया जो गर्मी में पैदल चलते हुए उन्हें राहत दे सकें।

ऐसी स्थिति से बचने के लिए समूची दुनिया को उस जीवनशैली से बचना होगा जो पर्यावरण में कार्बन सहित अन्य जहरीली गैसों का उत्सर्जन करती है। जलवायु परिवर्तन के लिए सारी दुनिया को संवेदनशील होना होगा। साथ ही सरकारों और प्रशासन को शहरों के बुनियादी ढांचों की सही बनावट के लिए भी जिम्मेदार बनना पड़ेगा।

अगर पचास टन भार वाली सड़क का निर्माण नौ टन भार के हिसाब से किया जाता रहा, तो जरा-सी बारिश में सड़कें दम तोड़ेंगी ही। अगर पुलों और सीवर प्रणाली के निर्माण के समय पानी के प्रवाह की दिशा का ध्यान नहीं रखा गया तो बारिश का पानी सड़कों पर जमा होगा ही। अगर बड़े बजट के बावजूद नालों की सफाई का काम इसलिए नहीं हो सका कि जिम्मेदार अधिकारियों ने समय पर उनकी सफाई की तरफ ध्यान नहीं दिया, तो बारिश के मौसम में बार बार सड़कों पर जलजमाव होगा ही और यदि तालाबों, झीलों पर होने वाले अतिक्रमणों को समय रहते नहीं रोका गया तो साफ्टवेयर इंजीनियर लैपटाप के साथ दफ्तर पहुंचने के लिए ट्रैक्टर पर सवार होने को मजबूर होंगे ही।

राष्ट्रीय सहारा

Date:29-09-22

बच जाएगी धरती!

संपादकीय

मनुष्य जब अपनी पर उतर आए तो वह अकल्पनीय संकटों से भी निपट सकता है। यह विज्ञान का ही कमाल है कि हमारे वैज्ञानिक भविष्य में हमारी प्यारी धरती पर आने वाले संभावित खतरों से निपटने की तैयारी में भी जुटे हैं। ऐसे ही एक प्रयास में अमेरिकी अंतरिक्ष एजेंसी(नासा) ने उल्का पिंड़ों या क्षुद्र ग्रहों की भविष्य में संभावित टक्कर से से पृथ्वी की रक्षा करने की मानव की क्षमता का परीक्षण करने के लिए एक छोटे से अंतरिक्ष यान को स्टेड़ियम के बराबर आकार वाले क्षुद्र ग्रह से सफलतापूर्वक

टक्कर मारकर इतिहास रच दिया। इस प्रयास को 26 सितम्बर को सुबह 4.45 मिनट पर डबल एस्टेरॉयड री-डायरेक्शन टेस्ट (डार्ट) मिशन के तहत अंजाम दिया गया। एक छोटे से अंतरिक्ष यान को एस्टेरॉयड डिडिमोस के चंद्रमा जैसे क्षुद्र ग्रह डाइमॉरफोस से कामयाबी से टकराया गया। इस प्रयोग को 14,000 मील प्रति घंटे की टक्कर के लिए डिज़ाइन किया गया था। यह कवायद इसलिए की गई थी कि क्या किसी दिन पृथ्वी को किसी उल्का पिंड या क्षुद्र ग्रह की संभावित विनाशकारी टक्कर से बचाने के लिए इस तकनीक के उपयोग से उसका मार्ग बदला जा सकता है? जॉन्स हॉपकिन्स यूनिवर्सिटी की एप्लाइड फिजिक्स लेबोरेटरी के नासा से अनुबंध के तहत किया गया यह मिशन पूरी तरह सफल रहा। यान के उल्का पिंड से टकराते ही रोमांच ने भरे वैज्ञानिक ख़ुशी से नाचते दिखाई दिए। इतिहास में पहली बार हुए इस ग्रह रक्षा परीक्षण को डार्ट मिशन नाम दिया गया था। भविष्य में धरती के ऊपर यदि किसी तरह के उल्का पिंड के टकराने का खतरा मंडराता है, तो इस तकनीक से पृथ्वी को बचाया जा सकता है। डाइमॉरफोस नामक क्षुद्र ग्रह गीजा के महान पिरामिड जैसा है, जो अभी पृथ्वी से लगभग सात मिलियन मील की दूरी पर है। यह डिडिमोस नाम के एक बड़े क्षुद्र ग्रह की परिक्रमा करता है। इससे निकट भविष्य में पृथ्वी को कोई खतरा नहीं है और यह सारी कवायद भविष्य की आशंकाओं को लेकर है। ऐसी आशंकाएं अभी तो हॉलीवुड़ की फिल्मों में ही देखी गई हैं, लेकिन भविष्य की तैयारी करके रखना ही उचित है। लेकिन मनुष्य धरती को बचाने के लिए इतना ही सतर्क है, तो उसे अंतरिक्ष में बढ़ रही होड़ को लेकर भी संवेदनशील होना चाहिए। अंतरिक्ष में कचरे की भरमार उल्का पिंड़ों से भी विनाशकारी साबित हो सकती है।

Live हिन्दुस्तान .com

Date:29-09-22

प्रतिबंध के बाद

संपादकीय

सद्भाव की राह छोड़कर कट्टरता का प्रसार करने वाले किसी भी संगठन पर प्रतिबंध स्वागत योग्य कदम ही कहा जाएगा। पिछले दिनों से लगातार शिकायतें मिल रही थीं और एनआईए व अन्य सुरक्षा एजेंसियां लगातार जांच व धरपकड़ में लगी थीं। ऐसे 19 मामले हैं, जिनके तार पीएफआई से जुड़े बताए जाते हैं। मंगलवार को भी इस संगठन के 170 कार्यकर्ताओं को गिरफ्तार किया गया है। उसके बाद ही गृह मंत्रालय ने पीएफआई और उसके सहयोगी संगठनों पर पांच साल के लिए प्रतिबंध लगाया है। आतंकी जुड़ाव को लेकर यह कार्रवाई की गई है और कई राज्यों ने केंद्र सरकार से पीएफआई पर प्रतिबंध लगाने की मांग की थी। सबसे पहले साल 2012 में केरल ने इस संगठन पर संदेह जताया था। देश को सुरक्षित रखने के लिए ऐसी कार्रवाइयां समय-समय पर होती रही हैं। एक समय देश में खूब आतंकी हमले होते थे और उनके पीछे ऐसे अन्य कट्टरपंथी संगठनों का नाम आता था। स्टूडेंट इस्लामिक मूवमेंट ऑफ इंडिया (सिमी) पर साल 2001 में प्रतिबंध लगाया गया था और साल 2008 में भी सुप्रीम कोर्ट ने प्रतिबंध बनाए रखने के लिए कहा।

बताया जाता है कि पीएफआई में सिमी सहित तीन अन्य संगठनों के कार्यकर्ता शामिल हो गए थे। इधर भाजपा के नेतृत्व वाली सरकार के कारण यह संगठन अपने जैसे अन्य संगठनों के साथ मिलकर लगातार सरकार की तीखी

आलोचना में जुटा था। गृह मंत्रालय का साफ कहना है कि ठोस सुबूत मिलने और एजेंसियों की रिपोर्ट के आधार पर कार्रवाई की गई है। वैसे इस प्रतिबंध को अदालती चुनौती देने का रास्ता खुला है, पर पीएफआई के कार्यकर्ताओं के लिए मुश्किलें तब बढ़ेंगी, जब उनके खिलाफ सुरक्षा एजेंसियां अकाट्य प्रमाण पेश करेंगी। आतंकवाद से किसी के प्रत्यक्ष या परोक्ष संबंध को हल्के में नहीं लिया जा सकता। पीएफआई अगर किसी देश विरोधी आपराधिक और आतंकी मामले में शामिल नहीं रहा है, तो उसे अदालत में यह साबित करना होगा। उसे साबित करना होगा कि यह संगठन भारत के लिए किसी प्रकार से खतरा नहीं है और उसे बाहरी स्रोतों से जायज धन व संविधान सम्मत समर्थन मिल रहा है। क्या पीएफआई खाड़ी के देशों में भारत के खिलाफ एजेंडा चलाकर धन जुटाता है? आरोप है कि वह विदेश में एक अखबार चलाता है, जिसका नाम तेजस गल्फ डेली है, जो कट्टरपंथ को हवा देने का काम करता है।

इसमें कोई शक नहीं कि कट्टरता के खिलाफ भारत में सतत अभियान चलाने की जरूरत है। सुरक्षा एजेंसियां इस काम को अंजाम देती रही हैं, पर उन्हें ज्यादा मुस्तैदी से काम करना होगा। दुनिया की नजर भारत पर है। जो देश अपने यहां कट्टर नीतियों का अनुसरण करते हैं, वे भी भारत से उदारता या धर्मनिरपेक्षता की उम्मीद करते हैं। भारत अपनी स्थापित छवि के अनुरूप आचरण करे, इससे बेहतर और कुछ हो नहीं सकता। धर्म के नाम पर बनने या चलने वाले संगठनों को विशेष रूप से संविधान पर गौर करना चाहिए। ऐसे संगठन चाहे किसी भी धार्मिक दायरे में आते हों, उनकी जिम्मेदारी है कि वे परस्पर द्वेष फैलाने के बजाय अपने समाज का सुधार करें, अपने समाज को सद्भावी बनाएं। नफरत या बदला आधारित देश बनाने की साजिश करना किसी के हित में नहीं है। बेशक, अपने समाज या देश के साथ गलत करने वाले सजा पाएंगे, लेकिन सुरक्षा एजेंसियों को ध्यान रखना होगा कि किसी भी निर्दोष को कठघरे में न खड़ा होना पड़े।

Date:29-09-22

उलझी दुनिया को सुलझाने लगा भारत

प्रशांत झा, (अमेरिका में हिन्दुस्तान टाइम्स संवाददाता)

अभी दुनिया भर में काफी ज्यादा उलझन है। मगर भारतीय विदेश मंत्री एस जयशंकर को न्यूयॉर्क में छह दिन और वाशिंगटन की उनकी यात्रा के शुरुआती दो दिन 'कवर' करते हुए मुझे यह सहज एहसास हुआ कि भारतीय कूटनीति किस कुशलता से इस अनिश्चित दुनिया से निपट रही है।

नई दिल्ली के लिए मौजूदा हालात खास हैं। रूस और यूक्रेन आपस में उलझे हुए हैं, लेकिन दोनों भारत के साथ दोस्ती के हिमायती हैं और नई दिल्ली को युद्ध के मामले में अपने पक्ष में करना चाहते हैं। यूरोप और अमेरिका इस जंग के प्रमुख खिलाड़ी हैं, जो कीव की मदद कर रहे हैं, लेकिन रूस के लिए मुश्किलें बढ़ाने वाली उनकी किसी कार्रवाई में भारत के भाग न लेने और उसकी उदासीनता के बावजूद वे नई दिल्ली के रुख से संतुष्ट हैं। एशिया, अफ्रीका व लातीन अमेरिका के छोटे-छोटे देश युद्ध के खिलाफ हैं और वे इस बात से दुखी हैं कि बिना किसी गलती के उनको इसका खमियाजा भुगतना पड़ रहा है। मगर दुनिया भारत की तरफ उम्मीद भरी नजरों से देखती है, क्योंकि वह युद्ध के परिणामों के बारे में उन वैश्विक मंचों पर अपनी बात साफगोई से कह सकता है, जहां उस दुनिया की पहुंच बहुत कम

है। संयुक्त राष्ट्र का शीर्ष नेतृत्व तो भारत को घटनाक्रम से अवगत करा रहा है और इस तनातनी को खत्म करने के महत्वपूर्ण साझेदार के रूप में उस पर भरोसा करता है।

जाहिर है, युद्ध से जुडे और इससे परे अहम रणनीतिक व विकास संबंधी मुद्दों पर दुनिया भारत का साथ चाहती है। कोई इसे विदेश मंत्रालय का वक्तव्य समझने की भूल न करे, बल्कि निजी अनुभव है। हिन्दुस्तान टाइम्स ने संयुक्त राष्ट्र महासभा के अलावा सात देशों के विदेश मंत्रियों से अलग से बात की, संयुक्त राष्ट्र के अधिकारियों से चर्चा की और दो सप्ताह पहले लॉस एंजिल्स में 'इंडो-पैसिफिक इकोनॉमिक फ्रेमवर्क मीट' के इतर कई दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों के राजनयिकों का मत जाना। ये तमाम लोग भारत का अधिकाधिक साथ चाहते हैं।

जहां ऑस्ट्रिया, एस्टोनिया और फिनलैंड ने रूसी राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन के युद्ध संबंधी बयान पर प्रधानमंत्री मोदी की टिप्पणी की तारीफ की और नई दिल्ली के साथ द्विपक्षीय रिश्ते को मजबूत बनाने पर जोर दिया, वहीं मेडागास्कर ने यह बात दोहराई कि वह किस तरह से 'भारत, भारतीयता और हिंद महासागर से जुड़ा रहा है'। उसकी इच्छा है कि छोटे देशों पर युद्ध के असर को कम करने के लिए नई दिल्ली के साथ साझेदारी बढ़ाई जाए। इसी तरह, ऑस्ट्रेलिया ने क्वाड में भारत की भागीदारी की सराहना की, तो लीबिया चाहता था कि उसके संक्रमणकालीन दौर में नई दिल्ली अधिक भागीदारी करे और त्रिपोली में अपना दूतावास फिर खोले। बोलीविया जहां लिथियम के दोहन संबंधी परियोजनाओं में हिस्सेदारी के लिए भारत को बुलाना चाहता है, तो दक्षिण एशियाई राष्ट्र चाहते हैं कि भारत इस क्षेत्र में संतुलन लाने के लिए और अधिक सक्रियता दिखाए, जबकि वे आर्थिक रूप से चीन के साथ कहीं अधिक मजबूती से जुड़े हुए हैं।

एक सार्वजनिक कार्यक्रम में यदि गुयाना के विदेश मंत्री ने रुंधे गले से महामारी के दौरान भारत की तरफ से मिली मदद के लिए शुक्रिया कहा, तो यमन ने भारत की खाद्य सहायता की तारीफ की। अगर तंजानिया मौजूदा दौर के तमाम बड़े मुद्दों पर भारत से सहमत है, तो संयुक्त राष्ट्र भारत के डिजिटल-संचालित वित्तीय समावेशन, कल्याण और नकद हस्तांतरण मॉडल को समझने व दोहराने का पक्षधर है।

अमेरिका के ही कई हलकों को लें। जहां पेंटागन चीन की चुनौती के बारे में स्पष्ट था और उसने भारत से कहा कि वह द्विपक्षीय सैन्य अभ्यासों को मजबूत बनाना चाहता है, तो अमेरिकी वैज्ञानिकों ने भारत के साथ हर क्षेत्र की उन्नत तकनीकों पर काम करने को लेकर उत्सुकता दिखाई। फिर चाहे वह राष्ट्रीय सुरक्षा का मसला हो, आर्थिक सहयोग का या फिर प्रतिभाओं का हरसंभव लाभ उठाने का। यदि अमेरिकी विदेश मंत्री एंटोनी ब्लिंकन ने मंगलवार के आधिकारिक समझौते से पूर्व वैश्विक हालात पर विचार-विमर्श के लिए भारतीय विदेश मंत्री को सोमवार को रात्रिभोज पर आमंत्रित किया, तो वाणिज्य मंत्रालय अमेरिकी कंपनियों को भारत भेजने व प्रमुख सामग्रियों की आपूर्ति शृंखला में नई दिल्ली की महत्वपूर्ण हिस्सेदारी को लेकर आशान्वित दिखा। व्हाइट हाउस भारत को स्पष्ट समर्थन देते हुए सुरक्षा परिषद में सुधार को अपना स्वर दे रहा है, तो संयुक्त राष्ट्र में अमेरिका आतंकवाद के खिलाफ भारत के साथ मिलकर काम कर रहा है। यहां आप पाकिस्तान के बेजा विलाप से कतई विचलित न हों। भारत की व्यस्तता कुछ अलग किस्म की है।

ये वे चंद बातें हैं, जो हाल-फिलहाल भारत को लेकर कही गई हैं। इसका अर्थ है कि भारत खुद को बहुत मुफीद स्थिति में देख रहा होगा। चीन नई दिल्ली को अमेरिकी रणनीतिक गुणा-भाग में अहम मानता है, पर रिश्ते सिर्फ वाशिंगटन तक सीमित नहीं हैं। मित्र-राष्ट्रों की चाहत और आर्थिक व सुरक्षा जुड़ाव दिल्ली को मास्को के लिए भी महत्वपूर्ण बना देता है। फ्रांस भारत की सामरिक स्वायत्तता संबंधी परंपरा का मुरीद है, तो मध्य यूरोपीय, बाल्टिक और स्कैंडिनेवियाई देशों को

दिल्ली की युद्ध की मुखालफत पसंद है। जापान और ऑस्ट्रेलिया मित्र राष्ट्र हैं। पश्चिम एशियाई देशों और इजरायल के साथ संबंध कभी इतने अच्छे नहीं रहे। यानी, अपने विकास मॉडल को बढ़ाने और दुनिया के कुछ हिस्सों में उसके विस्तार की क्षमता नई दिल्ली को वैश्विक स्थिति के लिहाज से आकर्षक बना रही है। सांस्कृतिक संबंध कैरिबियाई, अफ्रीका और प्रशांत द्वीप समूह में भारत को लोकप्रिय बनाते हैं। बाजार का आकार, तकनीक में बढ़त और अंतरराष्ट्रीय रिश्तों में समझाने-बुझाने वाला नजरिया, यानी 'सॉफ्ट पावर' तो भारत के कुल रुतबे में इजाफा करता है।

ये सब रणनीतिक विकल्प चुनने, अपनी आर्थिक ताकत बढ़ाने, वैश्विक जनता की भलाई में योगदान देने का दबाव भारत पर बनाते हैं, और यह सुनिश्चित करने की ताकीद भी करते हैं कि वह लोकतंत्र व बहुलतावाद का प्रकाश स्तंभ बना रहेगा। यदि भारत वैश्विक राजनीति को यूं ही दिशा देता रहा, तो दुनिया के लिए यह काफी अच्छा सहयोगी साबित होगा। साफ है, यह वक्त हमारे लिए काफी अहम है।